SAMVARDHINI
PEER REVIEWED MULTILINGUAL E-RESEARCH JOURNAL
(ISSN ONLINE: - 2583-7176)
https://samvardhini.in
https://www.samskritpromotion.in

SAMVARDHINI :- 01/12/2025
Volume - 7
Issue - 2
(ISSN ONLINE :- 2583-7176)
https://samvardhini.in

बौद्धकालीन स्त्री शिक्षा की प्रासंगिकता

डॉ. प्रियंका रस्तोगी

शोधसार

स्त्री किसी भी सभ्यता, राष्ट्र एवं समाज की अनिवार्य सहगामिनी है। इसके अभाव में किसी भी सभ्यता का उद्भव, संवर्धन तथा विकास सम्भव नहीं है। अतः शिक्षा, दर्शन और संस्कृति के समग्र अध्ययन में समाज के इस अर्द्धांश को महत्त्व देने में ही समाज का भविष्य विद्यमान है। ज्ञान-विज्ञान, सभ्यता, संस्कृति, धर्म, दर्शन तथा सामाजिक-नैतिक व्यवस्था के निर्माण में बौद्धकालीन अनेक विदुषियों का योगदान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रहा है। इसी क्रम में उस युग की स्त्री-शिक्षा व्यवस्था का विशद अवलोकन आवश्यक प्रतीत होता है।

कूटशब्द - बौद्ध शिक्षा, स्त्री शिक्षा, भिक्षुणी, बौद्ध संघ, शिक्षा संरचना, बौद्ध शिक्षा संस्थान।

डॉ. प्रियंका रस्तोगी
वरिष्ठ अनुसन्धात्री
केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय
जनकपुरी, नईदिल्ली।
ईमेल आई.डी.-
Ishika.sw@gmail.com

बौद्ध साहित्य के सूक्ष्म अवलोकन से यह प्रतिपादित होता है कि तत्कालीन स्त्रियाँ सामान्यतः शिक्षित, विद्यानुरागी तथा बौद्धिक साधना के प्रति समर्पित थीं। विद्या, धर्म एवं दर्शन के प्रति उनकी गहन अभिरुचि न केवल उनके व्यक्तिगत विकास की द्योतक है, बल्कि उस समय की उन्नत सामाजिक चेतना का भी प्रमाण है। माता-पिता द्वारा कन्याओं को शिक्षित करना दायित्व माना जाता था, जिसके फलस्वरूप विवाह से पूर्व कन्याएँ शास्त्र, परम्पराएँ, विधियाँ तथा शिल्पकलाओं का सुव्यवस्थित अध्ययन करती थीं।[1] 'पण्डिता', 'व्यक्ता' और 'मेधाविनी' जैसे विशेषण अविवाहित शिक्षित कन्याओं के लिए प्रयुक्त होना तत्कालीन उच्च स्त्री-शिक्षा का स्पष्ट संकेतक है। भिक्षुणी-संघ में प्रव्रजित स्त्रियों जैसे बुद्धमित्रा, खेमा, सुभद्रा, भद्राकुण्ड केशा, पटाचारा और जिनदत्ता[2] की विद्वत्ता तथा त्रिपिटक[3], विनय और दार्शनिक विमर्शों में उनकी दक्षता इस तथ्य को और सुदृढ़ करती है कि बौद्धकालीन स्त्रियाँ ज्ञान-पिपासा एवं बौद्धिक अनुशीलन में अग्रणी थीं।[4] इस ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में बौद्धकालीन स्त्री-शिक्षा की प्रासंगिकता का विवेचन समकालीन समाज में लैंगिक समानता, शैक्षिक अधिकार तथा नैतिक-मानवीय मूल्यों के संदर्भ में भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण दृष्टिगत होता है। इसी परिप्रेक्ष्य में तत्कालीन संघीय व्यवस्था का विवेचन किया जा रहा है।

संघ प्रवेश - यद्यपि बौद्ध धर्म स्वयं जाति, वर्ण, लिंग अथवा सामाजिक वर्ग के आधार पर किसी भेदभाव को स्वीकार नहीं करता, तथापि संघ की मर्यादा एवं अनुशासन की रक्षा के हेतु कुछ प्रवेश-नियम निर्धारित थे। विशेषतः भिक्षुणी-संघ में प्रवेश करते समय ''अन्तरायिक प्रश्नों'' की परंपरा थी, जिसके माध्यम से आवेदिका की नैतिक-सामाजिक पात्रता की परीक्षा ली जाती थी। उचित परीक्षण एवं अनुमोदन के पश्चात् ही प्रव्रज्या तथा उपसम्पदा प्रदान की जाती थी।

प्रवेश हेतु आयु-मानक

- **प्रव्रज्या** के लिए सामान्यतः 15 वर्ष की आयु। विशेष परिस्थितियों में कम आयु पर श्रामणेर/श्रामणेरी दीक्षा।
- **उपसम्पदा** के लिए 20 वर्ष की न्यूनतम आयु।[5]
- विवाहित स्त्रियों हेतु 12 वर्ष से कम गृहस्थ जीवन का अनुभव होने पर प्रवेश निषिद्ध।

---

1. शास्त्रे विधिज्ञ कुशला गणिका यथैव। ललितविस्तर (शिल्पसंदर्शन परिवर्त) 12/350
2. थेरी गाथा 65
3. लिस्ट ऑफ ब्राह्मी इन्सक्रिपशन्स, 925
4. विनयधरानं यदिदं पटाचारा। अंगुत्तर निकाय 1/14
5. भिक्खुनी पाचित्तिय 74

ये प्रावधान यह दर्शाते हैं कि बौद्धकाल में स्त्री-शिक्षा एक नियंत्रित तथा सुव्यवस्थित प्रक्रिया के रूप में विकसित थी।

संस्कार- बौद्ध शिक्षा-परंपरा में तीन बड़े संस्कार वर्णित हैं—विद्यारम्भ, प्रव्रज्या और उपसम्पदा।

- **विद्यारम्भ**- 5 से 7 वर्ष की आयु में सम्पन्न होने वाला यह संस्कार बालक-बालिका दोनों के लिए समान था। इसके अंतर्गत बुद्ध-पूजा, त्रिशरण ग्रहण, पंचशीलों का वरण आता है। इनके माध्यम से प्रारम्भिक नैतिक प्रशिक्षण दिया जाता था।
- **प्रव्रज्या (पब्बज्जा)**- यह प्रथम दीक्षा थी, जिसमें बालक-बालिका को विहार में प्रवेश देकर प्रारम्भिक बौद्ध शिक्षा शुरू की जाती थी। संघ-प्रवेश हेतु माता-पिता की अनुमति अनिवार्य थी।
- **उपसम्पदा**- यह उच्चतर दीक्षा थी, जिसके पश्चात् शिक्षमाणा भिक्षुणी बनती थी। उपसम्पन्ना स्त्री संघ में शिक्षण, उपदेश और प्रशासनिक कार्यों में सहभागिता की अधिकारिणी होती थी।

संघीय संरचना- बुद्ध द्वारा स्थापित बौद्ध संघ अत्यन्त सुव्यवस्थित एवं अनुशासित संस्था रही है। आनन्द के आग्रह पर गौतम बुद्ध ने महाप्रजापति गौतमी को प्रथम भिक्षुणी के रूप में प्रव्रज्या प्रदान कर भिक्षुणी-संघ की आधारशिला रखी। भिक्षुणी-संघ की स्थापना के समय अष्टगुरुधर्मों को स्वीकार करने पर नारी को प्रव्रज्या तथा उपसम्पदा प्राप्त होते थे और वह 'भिक्षुणी' के रूप में प्रतिष्ठित होती थी। परन्तु जैसे-जैसे भिक्षुणी बनने हेतु इच्छुक स्त्रियों की संख्या में वृद्धि हुई, प्रव्रज्या और उपसम्पदा के मध्य वैधानिक भेद स्थापित किया गया, जिसके फलस्वरूप 'श्रामणेरी' तथा 'शिक्षमाणा' जैसे नये पदों का प्रादुर्भाव हुआ। बौद्ध संघ में स्त्रियों के लिए कई विशिष्ट पद निर्धारित थे, जिनका अपना पृथक् शैक्षणिक महत्त्व था। यहाँ इन्हीं पदों का स्वरूप और उनकी विनयी-व्यवस्था का संक्षेप में विवेचन किया गया हैं।

श्रामणेरी

- प्रव्रज्या प्राप्त स्त्री।
- दश शिक्षापदों का पालन अनिवार्य।
- विनय-अभ्यास, भिक्षावृत्ति, संसाधन-प्रबंधन, छाया-ज्ञान आदि का प्रशिक्षण।

शिक्षमाणा

- दो वर्षों तक षट्-शिक्षापदों का अभ्यास।
- कुमारीभूता एवं गिहिगता दो श्रेणियाँ।
- उपसम्पदा की पूर्व-शर्त।

भिक्षुणी

- उपसम्पदा के पश्चात् पूर्ण अधिकार।
- संघ-प्रशासन, शिक्षा, उपदेश, ध्यान-साधना और विनय-अनुशासन में प्रमुख भूमिका।

उपाध्याया/प्रवर्त्तिनी

- कम से कम 12 वर्ष की भिक्षुणी।[6]
- श्रामणेरी और शिक्षमाणा को प्रशिक्षण देना।[7]
- विनय-अनुशासन तथा आचार-संवर्धन की महत्वपूर्ण भूमिका।

उपासिका

- गृहस्थ जीवन में रहकर धर्म का अभ्यास।
- श्रद्धा, श्रुत, शील, दान और प्रज्ञा पाँच गुणों का पालन।
- त्रिपिटक अध्ययन की स्वतंत्रता।[8]

थेरी

- उपसम्पदा के दस वर्ष पश्चात् प्राप्त पद।[9]
- संघमित्रा, घोषा आदि इस पद की प्रमुख प्रतिनिधियाँ।

ये पदानुक्रम यह दर्शाते हैं कि बौद्धकाल में महिलाओं के लिए एक समग्र, अनुशासित और संस्थागत शिक्षण-तंत्र विकसित था।

बौद्धकालीन साहित्य के प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष स्रोतों के आधार पर शिक्षा की तीन प्रमुख श्रेणियाँ मिलती हैं —

- प्रारम्भिक शिक्षा,
- उच्च शिक्षा तथा
- बौद्ध-धर्माधारित शिक्षा।

इन सभी रूपों का पाठ्यक्रम तत्कालीन सामाजिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक धारणाओं पर आधारित था।

प्रारम्भिक शिक्षा

ललितविस्तर में प्रारम्भिक शिक्षा का विस्तृत निरूपण मिलता है। इसके अंतर्गत लिखना, पढ़ना तथा

6. पातिमोख्य, भिक्खुनी पाचित्तिय, 74-75।
7. महावग्ग 5.4.2
8. प्रारम्भिक बौद्ध धर्म-संघ एवं समाज, पृ. 74
9. 'परिपुण्णदसवस्सताय थेरो'। समन्तपासादिका, भाग प्रथम, पृ. 232

गणित का प्राथमिक ज्ञान प्रदान किया जाता था।[10] शिक्षा का प्रारम्भ वर्णमाला-अध्ययन से होता था। तत्कालीन वर्णमाला में कुल 47 अक्षरों का उल्लेख मिलता है।[11] आरम्भिक शिक्षा के लिए *सिद्धमंचक* अथवा *सिद्धिरस्तु* नामक ग्रन्थ का अध्ययन अनिवार्य माना गया था। सात वर्ष अथवा उससे अधिक आयु प्राप्त करने पर विद्यार्थियों को पंचविद्याओं की शिक्षा दी जाती थी। शब्द-विद्या, हेतु-विद्या, शिल्प-विद्या, चिकित्सा-विद्या, अध्यात्म-विद्या। इन पंचविद्याओं का उद्देश्य विद्यार्थी की बौद्धिक, व्यावहारिक एवं आध्यात्मिक क्षमता का संतुलित विकास करना था।

उच्च शिक्षा- उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रम का निर्माण लौकिक एवं पारलौकिक प्रगति दोनों को ध्यान में रखकर किया गया था। इसमें जहाँ एक ओर बौद्ध धर्म, दर्शन एवं विनय-अनुशासन को स्थान प्राप्त था, वहीं दूसरी ओर अन्य समसामयिक धर्मों एवं दर्शनों का भी अध्ययन कराया जाता था, जिससे तुलनात्मक दृष्टि एवं व्यापक ज्ञान-विस्तार की प्रवृत्ति का विकास हो सके।

मिलिन्दपन्हो के आधार पर उच्च शिक्षा में निम्नलिखित विषय सम्मिलित थे— गणित, ज्योतिष, शब्द-विज्ञान, नक्षत्र-विज्ञान, छन्दशास्त्र, काव्य, व्याकरण, वेदों का अध्ययन, फलित-ज्योतिष, वेदांग-चतुष्टय, विवेचन-विद्या, जादू-विद्या, स्वर-विज्ञान, व्युत्पत्ति-शास्त्र, प्रतीक-शास्त्र, संगीत-शास्त्र, शकुन-विज्ञान, चित्रकला, धूमकेतु व उल्का-विज्ञान, स्वप्न-शास्त्र, युद्ध-विद्या, चिकित्सा व शल्यविज्ञान, इतिहास, कला, साहित्य, योग, सांख्य, न्याय, वैशेषिक दर्शन, तथा जीव-जन्तुओं एवं पक्षियों की भाषा।

सामान्य शिक्षा एवं भिक्षु-भिक्षुणी शिक्षा में स्पष्ट भेद था

- भिक्षुणियों के पाठ्यक्रम में ललित-कलाओं (नृत्य, गीत, वाद्य, सूतकातन आदि) को सम्मिलित नहीं किया गया था।
- सामान्य स्त्रियों को इनकी शिक्षा दिये जाने के उदाहरण तत्कालीन साहित्य में प्राप्त होते हैं।

त्रिपिटक-आधारित शिक्षा

संघ में मुख्य रूप से सुत्त-पिटक, विनय-पिटक एवं अभिधम्म-पिटक का अध्ययन कराया जाता था। इनमें समस्त प्राणियों के कल्याण का मार्ग, इहलोक एवं परलोक के सुख के साधन, तथा नैतिकता, संयम और ध्यान-साधना की शिक्षा समाविष्ट है।

10. ए.एस.अल्तेकर- एजुकेशन इन एशेन्ट इण्डिया, पृ. 177
11. हुएनसांग की भारत यात्रा पृ. 40

त्रिशिक्षा

बुद्ध द्वारा प्रतिपादित त्रिशिक्षा (शील, समाधि और प्रज्ञा) बौद्ध शिक्षा का मूलाधार है। यही विशुद्धि-मार्ग है, जिसके द्वारा तृष्णा का निरोध और निर्वाण की दिशा में प्रवर्तन संभव है।

षडक्षरी विद्या

बुद्ध द्वारा आनन्द को प्रदान की गई षडक्षरी विद्या मुख्यतः सुरक्षा एवं संरक्षण हेतु प्रयुक्त होती थी। इसका उपदेश भिक्षु, भिक्षुणी तथा उपासक-उपासिकाओं के हितार्थ किया गया है।

वशीकरण विद्या

कुछ ग्रन्थों में वशीकरण विद्या के संकेत भी प्राप्त होते हैं। उदाहरणतः, तथागत की माता ने आनन्द को अपने गृहारम्भ में बुलाने हेतु वशीकरण-मन्त्र का प्रयोग किया था।

व्यावहारिक शिक्षा

भिक्षु-भिक्षुणियों को धर्म-शिक्षा के साथ-साथ संसाधनों के सदुपयोग की भी शिक्षा दी जाती थी। उदाहरणतः,

- नया चीवर प्राप्त होने पर पुराना चीवर बिछौने की चादर में बदलना,
- उससे गद्दे का खोल बनाना,
- फर्श-पिछौना बनाना,
- झालन तैयार करना,
- और अंततः उसे कीचड़ के साथ मिश्रित कर पलस्तर के रूप में उपयोग करना।

यह क्रम दर्शाता है कि बौद्ध शिक्षा वेस्ट मैनेजमेंट और पुनर्चक्रण (Recycle) की आधुनिक अवधारणा के समतुल्य थी।

अष्टांगिक मार्ग

निर्वाण-प्राप्ति का मार्ग (सम्यक् दृष्टि, सम्यक् संकल्प, सम्यक् वाक्, सम्यक् कर्म, सम्यक् आजीविका, सम्यक् व्यायाम, सम्यक् स्मृति और सम्यक् समाधि) व्यक्ति के मानसिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक संपूर्ण विकास को लक्ष्य करता है। बौद्ध शिक्षा श्रद्धा, शील, विद्या, त्याग एवं प्रज्ञा के माध्यम से मानव-जीवन के सर्वांगीण अनुशासन एवं संरचना पर बल देती है।

अतः बौद्ध शिक्षण-पद्धति मूलतः ज्ञान-आधारित एवं धर्मनिरपेक्ष स्वरूप की प्रतीत होती है, जिसमें अध्यात्म और व्यवहार दोनों का संतुलित समन्वय है।

शिक्षण-केन्द्र - बौद्ध साहित्य में विविध शिक्षण-संरचनाओं का उल्लेख मिलता है, यथा, परिवार, मठ (विहार), लिपिशाला, उपोसथागार, भिक्षुणी-आश्रम, ध्यान-स्थल, अड्ढयोग, प्रासाद, हर्म्य एवं गुहा आदि। इन केन्द्रों ने ज्ञान-परम्परा के संरक्षण एवं प्रसार में अनन्य भूमिका निभाई।

मठ-विहार- भिक्षुणियों के प्रवेश के पश्चात् बुद्ध ने उनकी सुरक्षा एवं विनय-अनुशासन की दृष्टि से विहार-व्यवस्था को अंगीकृत किया। स्थायी आवास उपलब्ध होने से अध्ययन-अध्यापन की अनुकूल परिस्थितियाँ निर्मित हुईं। कालान्तर में यही विहार प्रमुख शिक्षण-केन्द्रों के रूप में विकसित हुए।

लिपिशाला- *ललितविस्तर* के अनुसार बालकों की प्रारम्भिक शिक्षा का केन्द्र 'लिपिशाला' था। इसमें लिपियों का अभ्यास, वर्णमाला, गणना तथा अन्य मूलभूत विद्याओं की शिक्षा दी जाती थी।

उपोसथागार- उपोसथागार वह स्थल था जहाँ *उपोस्थ* नामक धार्मिक कृत्य संपन्न किया जाता था।[12] तीन योजन की परिधि में स्थित सभी भिक्षुणियों के लिए उपोसथागार[13] में उपस्थिति अनिवार्य थी। संघ-परिषद् यहाँ यह भी निर्दिष्ट करती थी कि किस ऋतु का उपोसथ है। यहीं भिक्षुणियों की गणना, अनुशासन-निर्देश एवं उपदेश का प्रावधान था।[14]

भिक्षुणी-आश्रय- विनयपिटक में 'भिक्षुणी आश्रम' की सुदृढ़ व्यवस्था का उल्लेख मिलता है। यह 'छत्रिशालाओं' के रूप में भी विद्यमान थे। संघ की अनुमति से भिक्षु सूर्यास्त से पूर्व भिक्षुणियों को उपदेश प्रदान कर सकते थे।

बौद्धकालीन स्त्री-शिक्षा का विवेचन यह स्पष्ट करता है कि उस समय नारी शिक्षित, जागरूक, बौद्धिक रूप से सक्षम तथा सामाजिक-आध्यात्मिक जीवन की सक्रिय सहभागिनी थी। शिक्षा को केवल ज्ञानार्जन की प्रक्रिया के रूप में नहीं, बल्कि चरित्र-निर्माण, अनुशासन, नैतिकता और समाजोत्थान का माध्यम माना गया था। माता-पिता द्वारा प्रारम्भिक संस्कारों से लेकर मठ-विहारों में उच्च एवं विशिष्ट शिक्षा तक, संपूर्ण पद्धति स्त्री को आत्मनिर्भर, विवेकी और समाजोपयोगी बनाने के लक्ष्य पर आधारित थी। यदि इस ऐतिहासिक परंपरा को वर्तमान शिक्षा-व्यवस्था से जोड़ा जाए, तो कुछ अत्यंत महत्त्वपूर्ण बिंदु सामने आते हैं—

शिक्षा में समानता और अवसरों का विस्तार

बौद्धकाल में स्त्रियों को धर्म, दर्शन और विनय जैसे उच्च विषयों में प्रवेश मिला। आज भी शिक्षा-नीतियों में लैंगिक समानता पर बल दिया जा रहा है। यह बौद्धकालीन परंपरा का ही आधुनिक रूप है कि आज स्त्रियाँ विज्ञान, तकनीक, चिकित्सा, प्रबंधन और शोध जैसे सभी क्षेत्रों में नेतृत्व कर रही हैं।

12. ललित विस्तर (वैद्य), पृ. 87-89
13. महावग्ग पृ. 109-110
14. पातिमोख्य, भिक्खुनी पाचित्तिय 59

नैतिक-आधारित शिक्षा की आवश्यकता

बौद्ध शिक्षा का आधार शील, समाधि और प्रज्ञा था। बौद्धकालीन शिक्षा यह संदेश देती है कि ज्ञान तभी सार्थक है जब वह नैतिक मूल्यों से संतुलित हो।

व्यावहारिकता और जीवन-कौशल

बौद्ध भिक्षुणियों को चीवर-व्यवस्था, संसाधनों के पुनर्चक्रण, यात्रा-कौशल, समय-ज्ञान, औषधोपयोग आदि विभिन्न प्रकार के व्यावहारिक कौशल सिखाए जाते थे।

शिक्षक-प्रशिक्षण की सुदृढ़ प्रणाली

बौद्धकाल में आचार्य, उपाध्याय, उपाध्याया, थेरी आदि पदों के लिए कठोर पात्रताएँ

महिलाओं की बौद्धिक स्वतंत्रता

भिक्षुणियों जैसे खेमा, बुद्धमित्रा, जिनदत्ता का विद्वतापूर्ण योगदान यह दर्शाता है कि स्त्रियाँ ज्ञान-परंपरा की वाहक और निर्मात्री भी थीं। समकालीन भारत में महिला वैज्ञानिकों, लेखिकाओं, न्यायविदों, प्रोफेसरों और प्रशासकों की बढ़ती संख्या इसी ऐतिहासिक निरंतरता का आधुनिक रूप है।

शिक्षा-संस्थानों का विकास

बौद्धकालीन विहार, लिपिशाला, उपोसथागार आदि प्राचीन विश्वविद्यालयों की भूमिका निभाते थे।

ध्यातव्य है कि बौद्धकालीन स्त्री-शिक्षा समानता, व्यावहारिकता, नैतिकता और उच्च बौद्धिक प्रशिक्षण का अद्वितीय संगम थी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

अल्तेकर, ए.एस, एजुकेशन इन एन्शियन्ट इण्डिया, नन्द किशोर एण्ड ब्रो, बनारस, 1944
उपाध्याय, भरतसिंह, थेरी गाथाएं, सस्ता साहित्य मण्डल, दिल्ली, 1950
कौसलायन, आनन्द, अंगुत्तर निकाय, महाबोधि सभा, कलकत्ता, 1912
बुद्धघोष, सामन्तपासादिका, अनु. बीरबल शर्मा, नवनालन्दा महाविहार, पटना, 1964
ललितविस्तर, शान्ति भिक्षु शास्त्री, उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ 1984
वाजपेयी, शिवाकान्त, प्रारम्भिक बौद्ध धर्म-संघ एवं समाज, ज्ञानभारती पब्लिकेशन, दिल्ली, 2002
विनय पिटक, अनु. राहुल सांकृत्यायन, महाबोधि सभा, सारनाथ, 1935
शर्मा, ठाकुर प्रसाद, हुएनसांग की भारत-यात्रा, शब्द महिमा प्रकाशन, जयपुर, 2001